Journal of Social Review and Development, 2026; 5(Special Issue 3):38-41 ISSN NO: 2583-2816

आत्मनिर्भर भारत और राज्य की भूमिका: एक राजनीतिक विश्लेषण

डॉ. अर्चना

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, भक्त फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत, हरियाणा, भारत

Correspondence Author: डॉ. अर्चना

Received 1 Apr 2026; Accepted 12 May 2026; Published 29 May 2026

DOI: https://doi.org/10.64171/JSRD.5.S3.38-41

सारांश

आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना समकालीन भारतीय राजनीति, अर्थव्यवस्था और विकास विमर्श में एक केंद्रीय वैचारिक ढाँचे के रूप में उभरकर सामने आई है। वर्ष 2020 में कोविड–19 महामारी की अभूतपूर्व परिस्थितियों के बीच भारत सरकार द्वारा घोषित 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' ने यह स्पष्ट कर दिया कि राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया को केवल वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं और बाहरी निर्भरता के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। इस अभियान का उद्देश्य आर्थिक पुनरुत्थान, घरेलू उत्पादन को बढ़ावा, रोजगार सृजन, तकनीकी एवं औद्योगिक आत्मनिर्भरता तथा राष्ट्रीय आत्मविश्वास के सुदृढ़ीकरण से जुड़ा रहा है। किंतु आत्मनिर्भर भारत को केवल एक तात्कालिक आर्थिक पैकेज या विकासात्मक रणनीति के रूप में नहीं देखा जा सकता, बल्कि यह राज्य की भूमिका के पुनर्संरचन से जुड़ी एक व्यापक राजनीतिक और संस्थागत परियोजना भी है।

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा का ऐतिहासिक, वैचारिक और राजनीतिक विश्लेषण करता है। इसमें स्वतंत्रता आंदोलन के स्वदेशी विचार, गांधीवादी आत्मनिर्भरता की अवधारणा, नेहरूवादी नियोजित विकास मॉडल तथा 1991 के बाद के उदारीकरणोत्तर राज्य की भूमिका को आत्मनिर्भर भारत के वर्तमान स्वरूप से जोड़कर समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन यह दर्शाता है कि समकालीन भारत में राज्य की भूमिका केवल नीति–निर्माता तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि वह एक कल्याणकारी, नियामक और सहभागी अभिकर्ता के रूप में भी उभर रहा है। उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजनाएँ, सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम, डिजिटल शासन, स्टार्ट–अप एवं एमएसएमई को समर्थन तथा केंद्र–राज्य समन्वय इस बदलती भूमिका के महत्वपूर्ण आयाम हैं।

आत्मनिर्भर भारत की वास्तविक सफलता सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक सहभागिता और सहकारी संघवाद पर निर्भर करती है। यदि आत्मनिर्भरता की नीतियाँ समाज के कमजोर, हाशिए पर पड़े और वंचित वर्गों को सशक्त बनाने में असफल रहती हैं, तो यह अवधारणा अपने लोकतांत्रिक और नैतिक उद्देश्य से भटक सकती है। साथ ही, वैश्वीकरण के संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत को अंतरराष्ट्रीय अलगाव के रूप में नहीं, बल्कि रणनीतिक स्वायत्तता, संतुलित वैश्विक एकीकरण और राष्ट्रीय हितों की रक्षा के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। अंततः यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि आत्मनिर्भर भारत तभी सार्थक, समावेशी और टिकाऊ हो सकता है जब राज्य आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण के बीच संतुलन स्थापित करते हुए लोकतांत्रिक मूल्यों, संस्थागत पारदर्शिता और नागरिक सहभागिता को सुदृढ़ बनाए रखे।

मूलशब्द: आत्मनिर्भर भारत, राज्य की भूमिका, भारतीय राजनीति, सार्वजनिक नीति, कल्याणकारी राज्य, राजनीतिक अर्थशास्त्र, सामाजिक न्याय, वैश्वीकरण, रणनीतिक स्वायत्तता, नीति–निर्माण, लोकतांत्रिक सहभागिता, आर्थिक पुनरुत्थान।

1. परिचय

वैश्वीकरण के समकालीन दौर में आत्मनिर्भरता की अवधारणा को प्रायः आत्मकेन्द्रित, संरक्षणवादी अथवा वैश्विक अर्थव्यवस्था से पृथक होने वाले दृष्टिकोण के रूप में देखा जाता रहा है। किंतु भारत जैसे विकासशील और बहुआयामी अर्थतंत्र वाले देश के लिए आत्मनिर्भरता का तात्पर्य अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था से कटाव नहीं, बल्कि अपनी आंतरिक उत्पादन क्षमता, संस्थागत दक्षता और मानव संसाधनों के सुदृढ़ीकरण से है। आत्मनिर्भरता वस्तुतः वह आधार है जिसके माध्यम से कोई राष्ट्र वैश्विक प्रतिस्पर्धा में समानता के साथ भाग ले सकता है।

वर्ष 2020 में कोविड–19 महामारी के दौरान वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं में आए गंभीर व्यवधानों ने इस तथ्य को उजागर कर दिया कि अत्यधिक बाह्य निर्भरता किसी भी देश की आर्थिक स्थिरता और राजनीतिक संप्रभुता के लिए चुनौती बन सकती है। आवश्यक वस्तुओं, चिकित्सा उपकरणों और औद्योगिक कच्चे माल की आपूर्ति में उत्पन्न संकट ने विकास के मौजूदा मॉडल पर पुनर्विचार की आवश्यकता को रेखांकित किया। इसी ऐतिहासिक और वैश्विक संदर्भ में भारत सरकार द्वारा 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा की गई, जिसने राष्ट्रीय विकास के विमर्श को एक नई दिशा प्रदान की। आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा केवल आर्थिक पुनरुत्थान तक सीमित नहीं है, बल्कि यह राज्य की भूमिका के पुनर्परिभाषण से भी गहराई से जुड़ी हुई है। पारंपरिक रूप से राज्य को विकास का प्रमुख अभिकर्ता माना जाता रहा है, किंतु समकालीन संदर्भ में राज्य नीति–निर्माता के साथ–साथ एक उत्प्रेरक, नियामक और सहभागी संस्था के रूप में भी उभर रहा है। राज्य का उद्देश्य अब केवल संसाधनों का वितरण नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र, नागरिक समाज और स्थानीय संस्थाओं के साथ समन्वय स्थापित करते हुए विकास की अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित करना है।

आत्मनिर्भर भारत की प्रक्रिया में राज्य की इस बदलती भूमिका का राजनीतिक विश्लेषण करता है। यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि आत्मनिर्भरता की नीतियाँ भारतीय लोकतंत्र, संघीय ढाँचे और शासन प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित कर रही हैं। साथ ही, यह भी जाँचने का प्रयास किया गया है कि क्या आत्मनिर्भर भारत का मॉडल समावेशी विकास, सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप है। इस प्रकार, यह शोध पत्र आत्मनिर्भर भारत को एक व्यापक राजनीतिक परियोजना के रूप में विश्लेषित करने का प्रयास करता है।

2. आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा ऐतिहासिक और वैचारिक पृष्ठभूमि

भारत में आत्मनिर्भरता की अवधारणा कोई नवीन विचार नहीं है, बल्कि इसकी जड़ें भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में गहराई से निहित हैं। औपनिवेशिक शासन के दौरान आर्थिक शोषण और संसाधनों के केंद्रीकरण के विरोध में महात्मा गांधी ने 'स्वदेशी' आंदोलन और 'ग्राम स्वराज' की अवधारणा प्रस्तुत की थी। गांधी के अनुसार, आत्मनिर्भरता का अर्थ स्थानीय उत्पादन, आत्मसंयम और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था से था, जिसमें ग्राम स्तर पर उत्पादन और उपभोग का संतुलन स्थापित किया जा सके। यह दृष्टिकोण न केवल आर्थिक था, बल्कि नैतिक और सामाजिक मूल्यों से भी जुड़ा हुआ था।

स्वतंत्रता के बाद नेहरूवादी विकास मॉडल के अंतर्गत आत्मनिर्भरता को औद्योगिकीकरण, सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार और योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था के माध्यम से साकार करने का प्रयास किया गया। भारी उद्योगों, आधारभूत संरचना और विज्ञान–प्रौद्योगिकी में निवेश के द्वारा भारत को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने की नीति अपनाई गई। इस कालखंड में राज्य को विकास का प्रमुख वाहक माना गया और आयात–प्रतिस्थापन औद्योगिकीकरण नीति के माध्यम से विदेशी निर्भरता को कम करने का प्रयास किया गया। वर्ष 1991 के आर्थिक सुधारों के साथ भारत ने उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीति को अपनाया। इसके परिणामस्वरूप राज्य की प्रत्यक्ष भूमिका में कमी आई और बाजार तथा निजी क्षेत्र को विकास का प्रमुख माध्यम माना जाने लगा। इस दौर में आत्मनिर्भरता की अवधारणा पृष्ठभूमि में चली गई और वैश्विक एकीकरण को विकास का प्रमुख मार्ग माना गया।

वर्तमान में प्रस्तुत 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' इन सभी ऐतिहासिक अनुभवों से सीख लेते हुए एक संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह न तो पूर्ण राज्य नियंत्रण की वकालत करता है और न ही बाजार की अनियंत्रित शक्तियों पर पूर्ण निर्भरता का समर्थन करता है। राजनीतिक दृष्टि से यह एक ऐसे विकास मॉडल को सामने रखता है जिसमें राज्य रणनीतिक क्षेत्रों में हस्तक्षेप करते हुए नियामक और उत्प्रेरक की भूमिका निभाता है, जबकि निजी क्षेत्र को नवाचार, निवेश और उत्पादन के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा भारतीय विकास विचारधारा के ऐतिहासिक और वैचारिक विकास का समकालीन स्वरूप है।

3. आत्मनिर्भर भारत और राज्य की बदलती भूमिका

3.1 राज्य एक नीति–निर्माता के रूप में: आत्मनिर्भर भारत अभियान के अंतर्गत राज्य की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका एक सक्रिय नीति–निर्माता के रूप में उभरकर सामने आती है। उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजनाएँ (PLI), मेक इन इंडिया, स्टार्टअप इंडिया और डिजिटल इंडिया जैसे कार्यक्रम यह दर्शाते हैं कि राज्य दीर्घकालिक आर्थिक रणनीतियों के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभा रहा है। इन नीतियों का उद्देश्य घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देना, निवेश आकर्षित करना और भारत को वैश्विक विनिर्माण केंद्र के रूप में स्थापित करना है।

3.2 कल्याणकारी राज्य की भूमिका: राजनीतिक दृष्टि से आत्मनिर्भरता केवल औद्योगिक विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि मानव संसाधन विकास से भी गहराई से जुड़ी हुई है। शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, खाद्य सुरक्षा और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के माध्यम से राज्य नागरिकों को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करता है। यह भूमिका कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को सुदृढ़ करती है, जिसमें विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँचाने का लक्ष्य निहित होता है।

3.3 नियामक और संरक्षक के रूप में राज्य: आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में राज्य बाजार की अनियंत्रित शक्तियों को संतुलित करने के लिए एक नियामक और संरक्षक की भूमिका निभाता है। श्रम कानूनों में सुधार, एमएसएमई क्षेत्र को ऋण और सब्सिडी प्रदान करना तथा कृषि क्षेत्र में संरचनात्मक सुधार इसके उदाहरण हैं। यद्यपि इन प्रयासों का उद्देश्य आर्थिक दक्षता बढ़ाना है, फिर भी इन्हें लेकर राजनीतिक विवाद और सामाजिक प्रतिरोध भी सामने आए हैं।

3.4 उत्प्रेरक के रूप में राज्य: समकालीन विकास मॉडल में राज्य स्वयं उत्पादनकर्ता बनने के बजाय एक उत्प्रेरक की भूमिका निभा रहा है। बुनियादी ढाँचे का विकास, डिजिटल प्लेटफॉर्म की स्थापना और नीति–आधारित प्रोत्साहनों के माध्यम से राज्य निजी क्षेत्र और उद्यमिता के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करता है। इससे सार्वजनिक–निजी भागीदारी को बढ़ावा मिलता है।

3.5 सहभागी और समन्वयक राज्य: आत्मनिर्भर भारत की सफलता राज्य की सहभागी और समन्वयक भूमिका पर भी निर्भर करती है। केंद्र और राज्यों के बीच सहयोग, स्थानीय स्वशासन संस्थाओं की भागीदारी और नागरिक समाज के साथ संवाद इस प्रक्रिया को लोकतांत्रिक आधार प्रदान करते हैं। यह भूमिका सहकारी संघवाद और सहभागी लोकतंत्र को मजबूत करती है।

4. आत्मनिर्भर भारतः राजनीतिक निहितार्थ

4.1 संघवाद और केंद्र–राज्य संबंध: आत्मनिर्भर भारत की सफलता काफी हद तक भारत के संघीय ढाँचे और केंद्र–राज्य संबंधों पर निर्भर करती है। चूँकि अधिकांश नीतियों का क्रियान्वयन राज्य सरकारों के माध्यम से होता है, इसलिए सहकारी संघवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। यदि केंद्र द्वारा नीति–निर्माण में राज्यों की भागीदारी सुनिश्चित नहीं की जाती या उन्हें पर्याप्त वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता नहीं दी जाती, तो आत्मनिर्भरता का लक्ष्य कमजोर पड़ सकता है। इस संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत संघीय संतुलन की एक महत्वपूर्ण परीक्षा बन जाता है।

4.2 लोकतंत्र और नागरिक सहभागिता: आत्मनिर्भर भारत की राजनीतिक वैधता लोकतांत्रिक सहभागिता से गहराई से जुड़ी हुई है। पंचायती राज संस्थाएँ, नगर निकाय, स्वयं सहायता समूह और सहकारी संस्थाएँ स्थानीय स्तर पर आत्मनिर्भरता को व्यवहारिक रूप प्रदान करती हैं। जब नागरिक नीति–निर्माण और कार्यान्वयन में सहभागी बनते हैं, तब आत्मनिर्भरता केवल सरकारी कार्यक्रम न रहकर एक सामाजिक आंदोलन का रूप ले लेती है। इससे लोकतंत्र की जड़ें और अधिक सुदृढ़ होती हैं।

4.3 राष्ट्रवाद और आत्मनिर्भरता: राजनीतिक विमर्श में आत्मनिर्भर भारत को अक्सर राष्ट्रवाद की भावना से जोड़ा जाता है। यह नागरिकों में आत्मगौरव, राष्ट्रीय एकता और स्वदेशी उत्पादों के प्रति विश्वास को प्रोत्साहित करता है। सकारात्मक रूप में यह आर्थिक राष्ट्रवाद को बढ़ावा देता है, किंतु आलोचकों का मत है कि कभी–कभी इसे अतिराष्ट्रवादी राजनीतिक एजेंडे के रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है, जिससे आलोचनात्मक विमर्श की गुंजाइश सीमित हो जाती है।

4.4 सामाजिक न्याय और समावेशन: आत्मनिर्भर भारत के राजनीतिक निहितार्थ सामाजिक न्याय के प्रश्न से भी जुड़े हुए हैं। यदि आत्मनिर्भरता की नीतियाँ केवल बड़े उद्योगों और संगठित क्षेत्र तक सीमित रहती हैं, तो सामाजिक असमानताएँ और गहरी हो सकती हैं। इसलिए राज्य की जिम्मेदारी है कि वह वंचित वर्गों, ग्रामीण समुदायों, महिलाओं और असंगठित क्षेत्र को आत्मनिर्भरता की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल करे।

4.5 राज्य की वैधता और राजनीतिक उत्तरदायित्व: आत्मनिर्भर भारत राज्य की राजनीतिक वैधता और उत्तरदायित्व को भी प्रभावित

करता है। यदि राज्य आत्मनिर्भरता के नाम पर पारदर्शिता, संवाद और जवाबदेही को कमजोर करता है, तो लोकतांत्रिक विश्वास में कमी आ सकती है। इसके विपरीत, समावेशी और उत्तरदायी शासन आत्मनिर्भर भारत को एक स्थायी राजनीतिक परियोजना बना सकता है।

5. आत्मनिर्भर भारत और सामाजिक न्याय का प्रश्न

आत्मनिर्भर भारत की राजनीतिक और वैचारिक प्रासंगिकता सामाजिक न्याय के संदर्भ में विशेष महत्व रखती है। भारत जैसे सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विविधताओं से भरे समाज में आत्मनिर्भरता का अर्थ केवल आर्थिक वृद्धि या उत्पादन क्षमता में वृद्धि तक सीमित नहीं हो सकता। इसका वास्तविक आशय समाज के हाशिए पर स्थित वर्गों – जैसे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाएँ, अल्पसंख्यक, दिव्यांगजन, असंगठित क्षेत्र के श्रमिक तथा ग्रामीण गरीब – को विकास की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल करने से है। यदि आत्मनिर्भर भारत का लाभ समाज के सीमित वर्गों तक ही केंद्रित रहता है, तो यह विकास मॉडल असमानताओं को और गहरा कर सकता है।

इस संदर्भ में राज्य की भूमिका एक समान अवसर उपलब्ध कराने वाले अभिकर्ता के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। शिक्षा, कौशल विकास, स्वास्थ्य सेवाएँ, सामाजिक सुरक्षा और वित्तीय समावेशन जैसे क्षेत्रों में राज्य के हस्तक्षेप के बिना आत्मनिर्भरता की अवधारणा अधूरी रह जाती है। स्वयं सहायता समूहों, महिला उद्यमिता कार्यक्रमों, ग्रामीण आजीविका मिशनों और डिजिटल समावेशन जैसी पहलों के माध्यम से राज्य कमजोर वर्गों को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करता है। ये पहलें न केवल आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देती हैं, बल्कि सामाजिक आत्मविश्वास और राजनीतिक सहभागिता को भी मजबूत करती हैं।

राजनीतिक दृष्टि से यह भी महत्वपूर्ण है कि आत्मनिर्भर भारत की नीतियाँ सामाजिक समानता और न्याय के संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप हों। यदि नीति–निर्माण की प्रक्रिया में वंचित वर्गों की आवाज को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिलता, तो आत्मनिर्भरता का विमर्श लोकतांत्रिक वैधता खो सकता है। इसके अतिरिक्त, क्षेत्रीय असमानताओं और शहरी–ग्रामीण विभाजन को कम किए बिना आत्मनिर्भर भारत का लक्ष्य प्राप्त करना कठिन होगा। अतः यह कहा जा सकता है कि आत्मनिर्भर भारत की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि राज्य किस हद तक सामाजिक न्याय और समावेशी विकास को अपनी नीतियों के केंद्र में रखता है। जब आत्मनिर्भरता सामाजिक समानता के साथ जुड़ती है, तभी यह एक स्थायी और लोकतांत्रिक विकास मॉडल के रूप में स्थापित हो सकती है।

6. आत्मनिर्भर भारत, वैश्वीकरण और अंतरराष्ट्रीय राजनीति

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को प्रायः वैश्वीकरण के प्रतिरोध के रूप में देखा जाता है, किंतु राजनीतिक दृष्टि से यह व्याख्या अधूरी है। वास्तव में आत्मनिर्भर भारत का उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था से अलगाव नहीं, बल्कि वैश्विक प्रणाली में भारत की सशक्त और आत्मविश्वासी भागीदारी सुनिश्चित करना है। यह अवधारणा उस वैश्वीकरण मॉडल की आलोचना करती है जो विकासशील देशों को केवल उपभोक्ता या कच्चा माल प्रदाता बनाकर रख देता है। आत्मनिर्भर भारत इसी असंतुलन को दूर करने का प्रयास है।

अंतरराष्ट्रीय राजनीति के संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत 'रणनीतिक स्वायत्तता' की भारतीय परंपरा को सुदृढ़ करता है। रक्षा उत्पादन, ऊर्जा सुरक्षा, खाद्य आत्मनिर्भरता और डिजिटल संप्रभुता जैसे क्षेत्रों में घरेलू क्षमता का विकास भारत को वैश्विक दबावों से अपेक्षाकृत स्वतंत्र बनाता है। इससे भारत अपनी विदेश नीति में राष्ट्रीय हितों के अनुरूप निर्णय लेने की स्थिति में आता है। विशेष रूप से भू–राजनीतिक तनावों और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला संकटों के दौर में आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय सुरक्षा का महत्वपूर्ण आयाम बन जाती है। आत्मनिर्भर भारत वैश्वीकरण के साथ एक नए प्रकार के संबंध की परिकल्पना करता है, जिसे 'चयनात्मक वैश्वीकरण' कहा जा सकता है। इसमें भारत उन क्षेत्रों में वैश्विक सहयोग को बढ़ावा देता है जहाँ घरेलू विकास और तकनीकी उन्नति संभव हो, जबकि रणनीतिक क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता को प्राथमिकता दी जाती है। इस दृष्टिकोण से भारत बहुपक्षीय मंचों, मुक्त व्यापार समझौतों और अंतरराष्ट्रीय संगठनों में अपनी शर्तों पर सहभागिता की कोशिश करता है।

यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि आत्मनिर्भरता का अत्यधिक राजनीतिक उपयोग संरक्षणवाद और व्यापार प्रतिबंधों की ओर ले जा सकता है। अतः राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह वैश्विक सहयोग और राष्ट्रीय हितों के बीच संतुलन बनाए रखे। इस प्रकार, आत्मनिर्भर भारत वैश्वीकरण के विकल्प के रूप में नहीं, बल्कि उसके पुनर्संतुलन के प्रयास के रूप में उभरता है, जो भारत की अंतरराष्ट्रीय भूमिका को और अधिक सशक्त बनाता है।

7. आत्मनिर्भर भारत की चुनौतियाँ

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा जितनी महत्त्वाकांक्षी है, उसकी राह उतनी ही जटिल और चुनौतीपूर्ण भी है। सबसे पहली और प्रमुख चुनौती भारत की संरचनात्मक असमानता से जुड़ी है। क्षेत्रीय असंतुलन, शहरी–ग्रामीण विभाजन और संगठित तथा असंगठित क्षेत्रों के बीच गहरी खाई आत्मनिर्भरता के समान लाभ वितरण में बाधा उत्पन्न करती है। यदि इन असमानताओं को दूर किए बिना आत्मनिर्भरता की नीतियाँ लागू की जाती हैं, तो उनका प्रभाव सीमित रह सकता है।

दूसरी महत्वपूर्ण चुनौती कौशल और मानव संसाधन विकास से संबंधित है। तकनीकी आत्मनिर्भरता के लिए उच्च कौशलयुक्त श्रमशक्ति आवश्यक होती है, जबकि भारत में शिक्षा की गुणवत्ता, व्यावसायिक प्रशिक्षण और डिजिटल साक्षरता में अभी भी पर्याप्त अंतर दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त, अनुसंधान और नवाचार में निवेश की कमी तकनीकी पिछड़ेपन को बनाए रखती है, जिससे वैश्विक प्रतिस्पर्धा में टिके रहना कठिन हो जाता है।

वैश्विक स्तर पर आत्मनिर्भर भारत को तीव्र अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। मुक्त व्यापार समझौतों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और विकसित देशों की उन्नत तकनीकों के बीच घरेलू उद्योगों को सुदृढ़ बनाना एक बड़ी चुनौती है। यदि संरक्षणवादी नीतियाँ अत्यधिक बढ़ती हैं, तो इससे व्यापारिक संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

राजनीतिक दृष्टि से एक अन्य महत्वपूर्ण चुनौती राज्य के बढ़ते केंद्रीकरण और नीति–निर्माण में पारदर्शिता की कमी से जुड़ी है। यदि आत्मनिर्भर भारत के नाम पर निर्णय–प्रक्रिया अत्यधिक केंद्रीकृत हो जाती है और राज्यों, स्थानीय संस्थाओं तथा नागरिक समाज की भागीदारी सीमित रहती है, तो लोकतांत्रिक संतुलन प्रभावित हो सकता है। इससे नीतियों की प्रभावशीलता और वैधता दोनों पर प्रश्नचिह्न लग सकता है। सबसे बड़ी राजनीतिक चुनौती यह सुनिश्चित करना है कि आत्मनिर्भरता का लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचे। यदि आत्मनिर्भर भारत केवल बड़े उद्योगों, कॉरपोरेट क्षेत्र या शहरी मध्यम वर्ग तक सीमित रह जाता है, तो सामाजिक असंतोष, असमानता और राजनीतिक अस्थिरता की संभावनाएँ बढ़ सकती हैं। अतः इन चुनौतियों का समाधान किए बिना आत्मनिर्भर भारत का लक्ष्य पूर्णतः साकार नहीं हो सकता।

8. संभावनाएँ और भविष्य की दिशा

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा भारत को एक सशक्त, समावेशी और टिकाऊ विकास पथ की ओर अग्रसर करने की व्यापक संभावनाएँ रखती है। यदि इसे दीर्घकालिक दृष्टिकोण और संतुलित नीतियों के साथ लागू किया जाए, तो यह भारत की आर्थिक संरचना को मजबूत करने के साथ–साथ सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता को भी सुदृढ़ कर सकती है। आत्मनिर्भरता घरेलू उत्पादन क्षमता, नवाचार और कौशल विकास को बढ़ावा देकर भारत को वैश्विक अर्थव्यवस्था में एक आत्मविश्वासी भागीदार के रूप में स्थापित कर सकती है।

भविष्य की दिशा में राज्य की भूमिका निर्णायक बनी रहेगी। शिक्षा, अनुसंधान एवं विकास, विज्ञान–प्रौद्योगिकी तथा नवाचार में निरंतर निवेश दीर्घकालिक आत्मनिर्भरता की आधारशिला बन सकता है। विशेष रूप से हरित प्रौद्योगिकी, नवीकरणीय ऊर्जा और सतत औद्योगिक विकास के क्षेत्र भारत को न केवल आर्थिक लाभ प्रदान कर सकते हैं, बल्कि पर्यावरणीय चुनौतियों से निपटने में भी सहायक हो सकते हैं। इससे आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को सतत विकास लक्ष्यों से जोड़ा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, राज्य को स्वयं को एक सक्षम और उत्तरदायी संस्थान के रूप में विकसित करना होगा, जो नागरिकों, निजी क्षेत्र और नागरिक समाज के साथ साझेदारी में कार्य करे। सार्वजनिक–निजी भागीदारी, सहकारी संघवाद और स्थानीय स्वशासन संस्थाओं को सशक्त बनाना आत्मनिर्भरता की प्रक्रिया को जमीनी स्तर पर मजबूत कर सकता है। राजनीतिक इच्छाशक्ति, संस्थागत सुधार, पारदर्शी शासन और सामाजिक संवाद इस दिशा में महत्वपूर्ण कारक सिद्ध होंगे। आत्मनिर्भर भारत की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि यह आर्थिक वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्यों और पर्यावरणीय संतुलन को कितनी प्रभावी ढंग से समाहित करता है। यदि यह संतुलन स्थापित किया जाता है, तो आत्मनिर्भर भारत भारत के भविष्य के विकास का एक स्थायी और व्यापक मॉडल बन सकता है।

9. निष्कर्ष

आत्मनिर्भर भारत केवल एक आर्थिक कार्यक्रम या तात्कालिक नीतिगत पहल नहीं है, बल्कि यह भारत के समकालीन विकास विमर्श से जुड़ी एक व्यापक राजनीतिक परियोजना के रूप में उभरता है। यह अवधारणा राज्य की भूमिका को नए सिरे से परिभाषित करती है और उसे केवल संसाधनों के वितरणकर्ता तक सीमित न रखकर एक ऐसे सक्षम संस्थान के रूप में प्रस्तुत करती है जो कल्याणकारी, नियामक और उत्प्रेरककृतीनों भूमिकाओं का संतुलित निर्वाह करता है। आत्मनिर्भर भारत के माध्यम से राज्य आर्थिक संरचना को सुदृढ़ करने के साथ–साथ सामाजिक और संस्थागत विकास की दिशा भी निर्धारित करता है।

इस शोध पत्र के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि आत्मनिर्भरता की सफलता केवल उत्पादन वृद्धि, निवेश या औद्योगिक विस्तार पर निर्भर नहीं करती, बल्कि यह लोकतांत्रिक शासन, सामाजिक न्याय और समावेशी विकास की प्रक्रिया से गहराई से जुड़ी हुई है। यदि आत्मनिर्भर भारत की नीतियाँ समाज के कमजोर, हाशिए पर स्थित और वंचित वर्गों को सशक्त बनाने में सक्षम होती हैं, तभी यह अवधारणा लोकतांत्रिक वैधता प्राप्त कर सकती है। इसके विपरीत, यदि आत्मनिर्भरता का लाभ सीमित वर्गों या बड़े औद्योगिक हितों तक ही केंद्रित रह जाता है, तो इससे सामाजिक असंतोष और राजनीतिक अस्थिरता की संभावनाएँ बढ़ सकती हैं।

राजनीतिक दृष्टि से आत्मनिर्भर भारत संघीय ढाँचे की भी एक महत्वपूर्ण परीक्षा प्रस्तुत करता है। सहकारी संघवाद, केंद्र–राज्य समन्वय और स्थानीय स्वशासन संस्थाओं की सक्रिय भागीदारी के बिना आत्मनिर्भरता का लक्ष्य पूर्णतः साकार नहीं हो सकता। साथ ही, वैश्वीकरण के संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत को अंतरराष्ट्रीय अलगाव के रूप में नहीं, बल्कि रणनीतिक स्वायत्तता और संतुलित वैश्विक सहभागिता के रूप में समझा जाना चाहिए।

अंततः यह कहा जा सकता है कि आत्मनिर्भर भारत भारत के विकास पथ में एक महत्वपूर्ण, दूरगामी और परिवर्तनकारी कदम है, किंतु यह मार्ग चुनौतियों से मुक्त नहीं है। इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि राज्य किस हद तक लोकतांत्रिक मूल्यों, पारदर्शिता, सामाजिक न्याय और संघीय संतुलन को बनाए रखते हुए नीति–निर्माण और क्रियान्वयन करता है। यदि यह संतुलन स्थापित किया जाता है, तो आत्मनिर्भर भारत न केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता, बल्कि एक सशक्त और समावेशी भारतीय लोकतंत्र की आधारशिला सिद्ध हो सकता है।

संदर्भ सूची

1. गांधी मोहनदास करमचंद. हिंद स्वराज. नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद.
2. नेहरू जवाहरलाल. भारत की खोज. साहित्य अकादमी, नई दिल्ली.
3. कुमार कृष्ण. भारतीय राज्य और विकास. ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली.
4. सेन अमर्त्य. डेवलपमेंट ऐज फ्रीडम. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.
5. दत्त रमेश एवं सुंदरम के. पी. एम. भारतीय अर्थव्यवस्था. एस. चंद एंड कंपनी, नई दिल्ली.
6. भारत सरकार. आत्मनिर्भर भारत अभियान. नीति आयोग, नई दिल्ली.
7. भारत सरकार. आर्थिक सर्वेक्षण (विभिन्न वर्ष). वित्त मंत्रालय, नई दिल्ली.
8. नीति आयोग. भारत/2047: विकास दृष्टि दस्तावेज. भारत सरकार.
9. योजना पत्रिका. भारत सरकार, विभिन्न अंक.
10. कुरुक्षेत्र पत्रिका. ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार.
11. द हिंदू. संपादकीय लेख (आत्मनिर्भर भारत एवं आर्थिक नीति से संबंधित).
12. हिंदुस्तान टाइम्स. अर्थव्यवस्था एवं नीति संबंधी लेख.
13. नीति आयोग की आधिकारिक वेबसाइट – www.niti.gov.in
14. भारत सरकार की आधिकारिक वेबसाइट – www.india.gov.in.